वेद भाषा का प्रयोग व प्रचार सबका कर्तव्य

[मनमोहन आर्य](http://www.pravakta.com/author/manmohanarya)

‘संसार की भाषाओं में वेद भाषा ईश्वर प्रदत्त होने से सबसे प्राचीन

और महान तथा इसका सम्मान, प्रयोग व प्रचार सबका कर्तव्य’

मनमोहन कुमार आर्य

 संसार के सारे शिशु माता से जन्म लेकर जिस भाषा को सीखते व बोलते हैं तथा कुछ काल पश्चात जिस भाषा में व्यवहार करते हैं वह उनकी मातृ-पितृ भाषा का सन्तुलित रूप होता है। यह सिद्धान्त सर्वमान्य है जिसकी पुष्टि समाज में घटित होने वाले उदाहरणों से होती आ रही है। हम भी इसे स्वीकार करते हैं और हमारा मानना है कि सभी में अपनी मातृ-पितृ भाषा के प्रति स्वाभिमान का भाव होना चाहिये। अपनी मातृभाषा का प्रयोग करना उनका कर्तव्य एवं अधिकार है। हम यहां यह भी कहना चाहते हैं कि हमें माता-पिता ने जन्म अवश्य दिया है परन्तु माता-पिता तो जन्म देने में सहायक व साधन की भूमिका में होते हैं, जन्म तो ईश्वर या परमात्मा से मिला करता है। माता-पिता दोनों मिलकर एक सांसारिक व प्राकृतिक नियम का पालन करते हैं व गर्भस्थ शिशु की रक्षा व उचित आहार-विहार का ध्यान रखते है परन्तु शिशु की रचना, उसके शरीर व अंगों-प्रत्यंगों का निर्माण आदि कार्य तो इस सृष्टि के रचने वाले ईश्वर के द्वारा किया जाता है। परमेश्वर संसार का रचयिता है। उसने पहले इस सृष्टि को बनाया। किसके लिए बनाया? इसका उत्तर है कि अपनी सनातन प्रजा ‘‘जीवात्माओं’’ के लिए बनाया है। परमात्मा जीवात्माओं को उनके पूर्वजन्मों के कर्मों के अनुसार मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि योनियों में जन्म देता है और उनके पूर्व जन्मों व वर्तमान जीवन के कर्मानुसार सुख व दुःख उपलब्ध कराता है। यही प्रयोजन इस सृष्टि को रचने का है। यदि परमात्मा सृष्टि न बनाता तो यह सृष्टि कदापि अस्तित्व में न आती। और यदि सृष्टि न बनती तो अंसख्य व अनन्त संख्या वाली जीवात्मायें इस ब्रह्माण्ड के आकाश में सुषुप्ति व निद्रावस्था में विचरण किया करती। इससे सर्वशक्तिमान ईश्वर पर यह आरोप आता कि वह कैसा ईश्वर है जिसने सर्वशक्तिमान होने पर भी अपनी सनातन सन्तानों ‘‘जीवात्माओं’’ के सुख के लिए कुछ नहीं किया। इसी प्रश्न व इसके समाधान का साक्षात् उदाहरण यह सृष्टि, ब्रह्माण्ड व संसार है। ईश्वर इस सृष्टि की रचना कर इसे अपने नियमों में आबद्ध कर सुचारू रूप से चला रहा है।

  जब यह भौतिक संसार बना तो ईश्वर ने इसमें अन्य प्राणियों को जन्म देने के बाद स्त्री व पुरूषों को जन्म दिया। यह सभी स्त्री व पुरूष युवावस्था में उत्पन्न किये क्यूंकि यदि उन्हें शिशु रूप में उत्पन्न करता तो उनके पालन-पोषण के लिए माता पिता की आवश्यकता होती और यदि वृद्ध पैदा करता तो यह सृष्टि आगे चल नहीं सकती थी। अतः यही स्वीकार करने योग्य सिद्धान्त है कि इस संसार के सभी मनुष्यों के आदि पूर्वज ईश्वर द्वारा युवावस्था में उत्पन्न किए गए थे। यहां यह विशेष उल्लेखनीय है कि आदि सृष्टि में उत्पन्न स्त्री पुरूषों की संख्या अनेक स्त्री व अनेक पुरूषों अर्थात् सहस्रों में थी। इन मनुष्यों को आरम्भ में, जीवन के प्रथम दिवस ही, भाषा व ज्ञान की आवश्यकता थी जिसे पूरी करने वाला एकमात्र ईश्वर ही था जो इसकी पूर्ति करने में समर्थ था। मनुष्यों के द्वारा स्वमेव संसार की प्रथम भाषा व ज्ञान की उत्पत्ति सर्वथा असम्भव थी। अतः ईश्वर ने ही भाषा व ज्ञान की आवश्यकता को पूरा किया। वह ज्ञान क्या व कैसा था और भाषा कौन सी थी? इसका उत्तर केवल वैदिक धर्मी आर्य समाजियों के पास है। हमारे सनातन धर्म के विद्वान भी इसका उत्तर दे सकते हैं व उनके पास भी वही उत्तर है जो कि महर्षि दयानन्द और आर्य समाज द्वारा दिया गया है। यह उत्तर पूरी तरह तर्क व बुद्धिसंगत है। वह यह है कि ईश्वर ने आदि चार ऋषियों को संस्कृत भाषा का ज्ञान कराकर ‘‘वेदों’’ का ज्ञान दिया जो संख्या में 4 हैं। यह ज्ञान मन्त्रों के रूप में है जो कुल मिलाकर 20,232 हैं । यह वेद व इसके मन्त्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद के रूप में दिये गये हैं जो विगत 1,96,08,53,115 वर्षों से अपने मूल रूप में उपलब्ध हैं। इनकी भाषा वैदिक संस्कृत है। ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वसूक्ष्म, सर्वान्तर्यामी होने के कारण सभी जीवों की आत्माओं में विद्यमान है। ‘सर्वान्तर्यामी’ उसका एक विशेष गुण है। अतः वह जीवस्थ = सर्वान्तर्यामी स्वरूप से चार आदि ऋषियों को वेदों का ज्ञान देता है। उसी ने इन ऋषियों को वेदों के मन्त्रों का ज्ञान भी कराया जिसमें बोलना व जानना, समझना एवं शब्द-अर्थ-सम्बन्ध का ज्ञान भी सम्मिलित है। इसके बाद इन ऋ़षियों ने एक अन्य ऋषि ब्रह्मा जी को एक-एक कर चारों वेदों का ज्ञान कराया व स्वयं भी किया और तत्पश्चात इन पांचों ने परस्पर सहयोगपूर्वक शेष अन्य स्त्री-पुरूषों को पढ़ाकर वेदों का ज्ञान कराया।

 यह बात तो वेदों के ज्ञान की हुई। यहां एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या भाषा और सामान्य ज्ञान अन्य स्त्री व पुरूषों को ईश्वर से प्राप्त हुआ अथवा इन ऋषियों के द्वारा प्राप्त हुआ। हमारा चिन्तन कहता है कि यदि ऋषि-मुनि आरम्भ में शेष मनुष्यों को भाषा व न्यूनतम आवश्यकता के अनुरूप सामान्य ज्ञान कराते तो इस कार्य में बहुत समय लग जाता और इस कालावधि में इन मनुष्यों को अपने जीवन निर्वाह में नाना प्रकार की कठिनाईयां सामने आती। इसका कारण यह है कि भाव, ज्ञान व भाषा का परस्पर गहरा सम्बन्ध है जो अन्तनिर्हित वा आपस में जुड़ा हुआ है। बिना भाषा के भाव उत्पन्न ही नहीं हो सकते। भावों की उत्पत्ति के लिए भी भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। इस पर विस्तार से विचार व चिन्तन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि पांच ऋषियों से इतर अन्य सभी स्त्री पुरूषों को भी परमात्मा ने अन्तर्यामी स्वरूप से भाषा के साथ सामान्य ज्ञान कराया था। यदि वह न कराता तो सृष्टि की प्रथम पीढ़ी के स्त्री-पुरूषों को अपना जीवन निर्वाह करने में भारी संकट उपस्थित हो जाते। हम एक ऐसे समाज जहां बड़ी संख्या में युवा-स्त्री व पुरूष हों, की कल्पना करके देख सकते हैं कि यदि उन्हें किसी भी भाषा का ज्ञान न हो तो उन्हें क्या समस्यायें व कठिनाईयां होगीं? यदि किसी मनुष्य को भाषा व अन्य विषयों का न्यूनतम ज्ञान नहीं होगा तो उन्हें अन्य किसी प्रकार का सामान्य व विशेष ज्ञान हो ही नहीं सकता। यहां हमें लगता है कि ईश्वर ने सभी पशु-पक्षियों आदि योनियों में आवश्यकतानुसार भाषा सहित न्यूनतम ज्ञान दिया हुआ है और वह मनुष्यों की भांति वाक् शक्ति न होने पर भी अपना कार्य आसानी से कर लेते है। उन पशु-पक्षियों आदि जितना व उस प्रकार का ज्ञान तो दिया ही होगा जिससे आदिकालीन सभी मनुष्य सभ्यतापूर्वक मल-मूत्र का त्याग, स्नान, कन्द-मूल-फल-दुग्ध आदि का सेवन व सभ्य लोगों के जीवन मूल्यों का पालन करने में समर्थ हो सकते हों।

  यदि पशु-पक्षियों की स्थिति पर विचार करें तो मोटे रूप में हम देखते हैं कि उनके पास कोई भाषा नहीं है, वह आपस में बोलते नहीं हैं और उनका काम बिना भाषा के चल रहा है। हमें लगता है कि इनकी स्थिति कुछ इस प्रकार की है जैसे कि किसी विद्वान का जिह्वा किसी दुर्घटना में क्षति ग्रस्त हो जाये तो वह भाषा का ज्ञान रखते हुए व उसे जानते हुए भी अपनी बात बोल कर कह नहीं सकेगा परन्तु वह अपने आप में चिन्तन अवश्य कर सकता है और अपनी बात को संकेतों में कह सकता है। ऐसी ही व इससे कुछ मिलती-जुलती स्थिति पशुओं व पक्षियों की प्रतीत होती है। वह बोल नहीं सकते परन्तु समझते सब कुछ हैं। परमात्मा ने उनको अन्तर्निहित भाषा का ज्ञान करा रखा है जिसमें वह सोचते हैं, समझते हैं, वह बोलने की कोशिश करते हैं परन्तु उनसे बोला नहीं जाता। वह चंू-चूं या भंू-भू आदि कर लेते हैं। इससे लगता है कि वह कुछ कहना चाहते हैं परन्तु स्पष्ट रूप से कह नहीं पा रहे हैं। यह कुछ ऐसा है कि कोई वाणी का अपराध या पाप करे तो उससे बोलने की शक्ति छीन ली जाये या जीभ काटने की सजा उसे दी जाये। ऐसा ही कुछ पशु-पक्षियों आदि के मामले में लगता है। इस पर खोज की जानी चाहिये। हमने सुना या पढ़ा है कि हमारे किसी वैज्ञानिक ने अनुसंधान कर यह पाया था कि पशु-पक्षी ही नहीं अपितु वृक्षों तक की भी अपनी भाषा होती जिसमें वह व्यवहार करते हैं। यह विषय जटिल है एवं अनुसंधान की अपेक्षा रखता है। महाभारत में भी इसका कुछ संकेत है कि युधिष्ठिर व पाण्डव आदि पशुओं की ध्वनियों व व्यवहार से उनका आशय व अभिप्राय समझ जाते थे। विराटनगर में द्रोपदी के अपहरण के प्रकरण में यह संकेत मिलता है।

  इस विषय को हम यहीं पर छोड़ते हैं जिसका कारण कि हमारे मुख्य विषय में यह जानना सम्मिलित नहीं है। हमें इतना ही अभीष्ट है कि ईश्वर से वेदों का ज्ञान व वेदों की दैवीय भाषा संस्कृत की प्राप्ति हुई थी। यहां इतना विचारणीय अवश्य है कि वेदों की जो भाषा है, क्या वही ईश्वर की अपने ज्ञान, विचार व चिन्तन की भाषा भी है। विचार व चिन्तन करने पर हमें यहां प्रतीत होता है कि वेद भाषा तो ईश्वर की भाषा है ही, इसके साथ क्योंकि इसका कार्य व कर्तव्य मनुष्य से अधिक विस्तृत हैं, अतः ईश्वर की भाषा इस वैदिक संस्कृत के अनुरूप व इससे कुछ अधिक विस्तृत हो सकती है।

  जब भी हम बाजार से कोई इलेक्ट्रानिक वस्तु खरीदते है तो इसमें चतम.सवंकमक या पूर्व निर्मित कुछ चीजें साथ में दी जाती हैं। यदि वह न हों तो खरीदी गई वस्तु का कोई उपयोग नहीं होता। इसी प्रकार से जब ईश्वर ने मनुष्यों को बनाया तो उसने उन्हें भाषा का ज्ञान भी दिया होगा जिसे आज की भाषा में चतम.सवंकमक कह सकते हैं। इसके साथ चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा जो उत्कृष्ट प्रतिभाशाली थे, उन्हें अलग-अलग ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद का ज्ञान दिया। इन वेदों में जो भाषा है वह यद्यपि ईश्वर ने मनुष्यों के प्रयोग के लिए दी है परन्तु यह भाषा ईश्वर की अपनी निज भाषा होनी भी सम्भव है। ईश्वर भी अनेक कार्यों को करता है। उसने सृष्टि बनाई, इसका पालन व समय आने पर प्रलय करना भी उसका कार्य है। उसका प्रत्येक कार्य समय पर होता है। वह सर्वज्ञ है अर्थात् उसको हर विषय का पूरा-पूरा ज्ञान है जो कभी न्यूनाधिक नहीं होता। ईश्वर व उसके कार्यों के पूर्ण होने के कारण उसमें वृद्धि की कोई सम्भावना नहीं है। वृद्धि तो तब हो जब उसमें कोई न्यूनता हो, जो कि किंचित् मात्र नहीं है। आलस्य-प्रमाद, राग-द्वेष आदि दुर्गुण न होने के कारण वह न्यून कभी नहीं होता। अतः उसका वेदों का जो ज्ञान है व उसमें जो भाषा है वह ईश्वर की अपनी भाषा है, इसको कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। यदि है तो भी ठीक है और न हो तो भी यह तो मानेंगे हि कि उसने माता-पिता-आचार्य की तरह से आदि ऋषियों को वेद भाषा व वेद का ज्ञान दिया और इसी भाषा का अन्य मनुष्यों – स्त्री व पुरूषों को भी ज्ञान दिया। इसी भाषा में हमारे चारों ऋषि, ब्रह्मा जी व अन्य जन साधारण मनुष्य परस्पर संवाद करते थे। यह सभी लोग ही आज के संसार के आदि पूर्वज पुरूष थे। इन सभी आदि पूर्वजों व मनुष्यों की भाषा एक वेद-भाषा-संस्कृत थी। उनसे जो सन्तानंे पैदा र्हुइं थीं, स्वाभाविक रूप से उनकी भाषा भी वही वेदों की संस्कृत थी। बहुत बड़ा समय इसी भाषा का प्रयोग करते हुए हमारे पूर्वजों ने एक दूसरे के साथ व्यतीत किया। जनसंख्या बढ़ी, समस्यायें पैदा हुईं, सारी पृथिवी खाली पड़ी थी, अतः उन्होंने आगे बढ़ना आरम्भ किया। चारों दिशाओं में वह लोग बढ़े और समय व आवश्यकतानुसार बढ़ते ही रहे। इस प्रकार से सारा संसार बस गया और भाषा में विकार पर विकार अर्थात् अपभ्रंश होते-होते वर्तमान स्थिति आई है अर्थात् अनेक भाषायें बन गई है। आरम्भ में सैकड़ों हजारों वर्षों तक हम सबके पूर्वजों की एक ही भाषा वेद भाषा संस्कृत थी और विगत 1 अरब 96 करोड़ वर्षों में भाषा में परिवर्तन व विकार होते-होते भाषायें आमूल-चूल बदल गईं। आज उनका वह स्वरूप है जो देश व विदेश में हम देख रहे हैं। यह परिवर्तन होने स्वाभाविक ही थे।

 इस लेख में यह स्थापित हुआ है कि सृष्टि की आदि में सारे संसार के पूर्वज एक थे व एक साथ रहते थे। उनका सम्बन्ध भाईयों की तरह मिलकर रहना और परस्पर व्यवहार करना था। उनकी भाषा भी एक थी जो उन्हें ईश्वर से मिली थी। वह भाषा वेदों की भाषा संस्कृत ही थी, अन्य कोई सम्भावना नहीं है। इसी भाषा में समय के साथ विकार होकर लौकिक संस्कृत व अन्य सभी भाषायें बनी है। वेदों की भाषा संस्कृत ही हम सबके पूर्वजों की गौरवमयी भाषा होने के साथ ईश्वर प्रदत्त व ईश्वर की अपनी भाषा है। ईश्वर हमारा माता-पिता व आचार्य है और इस कारण यह वैदिक संस्कृत भाषा भी सारी दुनियां के लोगों की आरम्भ की मातृ-पितृ व गुरू भाषा है। यह सत्य व प्रमाण हमें अर्थात् सारे संसार के लोगों को स्वीकार करना है। इस भाषा को ही सारे संसार के निवासियों को साम्प्रदायिक भावना से उपर उठकर मातृभाषा, पूर्वजों की भाषा व आद्य गुरू भाषा का स्थान देना है। केवल स्थान ही नहीं देना है अपितु इसकी रक्षा कर अपने पूर्वजों के ग्रन्थों वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि का अध्ययन भी करना है। यदि हम इस सत्य को स्वीकार कर लें तो आज सारे संसार में शान्ति स्थापित होकर नये स्वर्णिम युग का प्रारम्भ हो सकता है। हम यह चाहते हैं कि इस प्रश्न व विषय पर सारे संसार के भाषाविद् विचार करें और इसकी पुष्टि करें। यदि इसके विरोध में उनके पास प्रबल प्रमाण हों जो विचार व चिन्तन की कसौटी पर ग्राह्य व स्वीकार हों, उनका परस्पर आदान-प्रदान कर सत्य को स्वीकार व असत्य का परित्याग करें। आईये, हम जितना भी जान सकें, अपनी सबसे पुरानी ईश्वर प्रदत्त वेद भाषा जो हम सबके पूवर्जों की मातृ भाषा रही है, उसे जानने का प्रयास आरम्भ कर दें। आर्य समाज के विद्वान व संस्कृत व संस्कृति के पण्डित इस कार्य की अनुवाई करें, तो धीरे-धीरे ही सही यह कार्य सही दिशा में आगे बढ़ सकता है।

 वैदिक संस्कृत आदि पूवजों को ईश्वर प्रदत्त मातृ भाषा तुल्य सबके सम्मान व प्रयोग की भाषा है जिसकी रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। यह संस्कृत भाषा सारे संसार के लोगों की विरासत है। मत-मतान्तरों के ठेकेदारों ने लोगों को भ्रमित किया हुआ है। हमें अपने विवेक से असत्य का त्याग कर सत्य का ग्रहण करते हुए अपनी वर्तमान की मातृभाषा के साथ इस ईश्वरीय व पूर्वजों की मातृभाषा को भी सम्मान देना है व प्राणपण से इसकी रक्षा करना सभी विश्व मानवों का कर्तव्य है। क्या हम अपना कर्तव्य पहचान कर उसका निर्वाह कर पायेगें?